पंचायती राज स्थानीय स्व–शासन

डॉ. बासुकी नाथ चौधरी,

एसोसिएट प्रोफेसर,
पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज (सांध्य),
दिल्ली विश्वविद्यालय

सार

पंचायत का स्वरूप जैसा आज है, वैसा पहले नहीं था लेकिन तब देश का स्वरूप भी दुनिया के किसी भी कोने में जैसा आज है, वैसा पहले तो नहीं था ना। लेकिन भारत में पंचायत का अस्तित्व था। केन्द्रीकरण और विकेन्द्रीकरण शासन पद्धति के दो तरीके हैं। प्रजातंत्र को छोड़कर कोई ऐसी शासन पद्धति नहीं है जिसमें अधिक से अधिक जोर विकेन्द्रीकरण पर दिया जाता है। भारत को प्रजातन्त्र का अनुभव पहले भी था। इसीलिए ईसा के 1200 वर्ष पहले भी ऋग्वेद में पंचायत का उल्लेख मिलता है। धीरे–धीरे पंचायत का स्वरूप बदलता गया लेकिन जिस दिन अंग्रेजों ने भी अपना शासन भारत में स्थापित किया, उस दिन भी भारतीय गाँव आत्मनिर्भर था और उसका शहर से कोई सम्बन्ध नहीं था। साफ है कि ग्रामवासी अपने मतभेदों को और अन्य किस्म के झगड़ों से बचने या सुरक्षा के लिए ग्रामीण व्यवस्था पर ही निर्भर थे। पुलिस और न्यायालयों की शक्ति भी उन्हीं के पास थी। ऐसा बिना किसी कारण नहीं है कि प्रोविजनल गवर्नर जनरल ऑफ इण्डिया मेटाकॉफ (1835–36) ने भारतीय ग्रामीण सामुदायिक व्यवस्था को 'लघु गणराज्य' कहकर बुलाया था। जातीय पंचायतों का अस्तित्व उस समय भी था और आज भी। आज संवैधानिक तौर से ग्राम पंचायत है और अनौपचारिक तौर पर जातीय पंचायत है। बिहार के ऐसे प्रत्येक जगह में जहाँ जुलाहों की उपस्थिति है और धार्मिक रूप से वे कबीरपंथ के उपासक हैं, ''साहेब'' का चुनाव अनौपचारिक तौर पर जातीय पंचायत के माध्यम से होता है। कई पंचायतों को मिलाकर एक ''साहेब'' का चुनाव होता है।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भी गांधीजी पंचायती राज की वकालत करते रहे। यही नहीं, उन्होंने तो गणराज्य की सबसे निचली ईकाई ग्राम को ही माना था और उनके अनुसार हमारे हर प्रतिनिधि का चुनाव ग्रामीण चुनावी रास्ते से जाता था। यह सभी नेताओं को पता था परन्तु समय की मांग रही होगी कि पंचायती राज को संविधान के भाग–4 'राज्य के नीति निदेशक तत्व' में जगह मिला। धीरे–धीरे पंचायत का विकास होता रहा भारत में और अन्ततः आज पंचायती राज (गाँवों में) और शहरों में शहरी स्थानीय निकाय संस्था ने भाग 4 से निकलकर संवैधानिक संस्था का रूप ले लिया है। यही इस पेपर का मुख्य उद्देश्य है। यह पेपर इस बात की भी पड़ताल करेगा कि क्या गांधी का सपना पूरा हो गया है? आज का पंचायत क्या गांधी का आदर्श पंचायत है।

विषयवस्तु

तो आइये, भारतीय संदर्भ में ब्रिटिश प्रशासन के समय से ही इसका विकास कैसे और कब हुआ का विस्तृत विवेचन करें।

ग्रामीण प्रशासन को एक औपचारिक संस्था के रूप में अंग्रेजी हुकूमत के द्वारा

जवाबदेह और प्रतिनिध्यिात्मक संस्था के रूप में स्थापित किया गया। मद्रास में म्युनिसिपल कॉरपोरेशन की स्थापना 1687 में ही हुई जिन्हें सामाजिक हित के कार्यों के लिए कर लगाने की शक्ति भी प्रदान की गयी। बाद में न केवल इस संस्था की शक्ति में वृद्धि की गई वरन् ऐसी ही संस्थाओं का निर्माण देश के अन्य नगरों में भी किया गया और कर लगाने की शक्ति को भी बढ़ाया गया। अन्तर केवल इतना था कि आज के प्रतिनिधि निर्वाचित प्रतिनिधि है जबकि उस समय मनोनीत सदस्य होते थे। निर्वाचन की प्रक्रिया प्रारम्भ भी नहीं हुई थी।[i]

भारत में नगरीकरण पिछले 30–35 साल में बहुत तेजी से हुआ है। किसानों की हालत इतनी बदतर है कि प्रत्येक व्यक्ति शहर की ओर पागलों की तरह भाग रहा है। शायद इसका एक खास करण है सामाजिक संस्कृति। जितने अगड़ी जातियों के बिहारी झुग्गियों में रहकर रिक्शा चलाते हैं और उनके घर की महिलाएँ किसी के घर में झाड़ू–पोछा करती हैं, अगर यही काम वो बिहार में करें तो उनकी बहन–बेटी की शादी मुश्किल हो जाये। लगभग 30–35 साल पहले की तुलना में आज नगर की आबादी तीन गुणा तक बढ़ गयी है। लेकिन उनके लिए वे सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं जो होनी चाहिए। शहरी नगरी निकाय कुछ नहीं कर रहा है। शुद्ध एवं स्वच्छ पेय जल का अभाव है, प्रदूषित जहरीली हवा और आवास की कमी के कारण झुग्गियों की बस्तियों की संख्या बढ़ती जा रही है। चारों ओर गंदगी का साम्राज्य है। हालत तो इतनी बदतर है कि प्रधानमंत्री के ''स्वच्छ भारत अभियान' में शहरी निकायों की कोई चर्चा नहीं है।

स्थानीय स्वशासन के पक्ष में यदि विकेन्द्रीकरण का इतिहास खोजें तो इस विकेन्द्रीकरण के पक्ष में पहली बार वायसराय मायो ने अपने काउंसिल से एक प्रस्ताव पास करवाया। प्रस्ताव की आत्मा थी कि स्थानीय संस्थान जनता के हित में उनकी माँगों के हिसाब से प्रशासनिक गुणवत्ता बढ़ायें और कार्यों के सम्पादन के लिए आर्थिक मदद की जाये।[ii] 1870 के अधिनियम में मनोनीत सदस्यों की पंचायत को बनाने का अधिकार जिलाधीशों को दिया गया। 1882 (18 मई) को स्थानीय बोर्डस का प्रस्ताव वायसराय रिपन ने करवाया और इसकी विलक्षणा थी कि पहली बार निर्वाचन की व्यवस्था थी, गैर सरकारी सदस्यों के बहुमत की स्वीकृति दी गयी और यह भी नियम बनाया कि इस बोर्ड का अध्यक्ष गैर सरकारी व्यक्ति ही होगा। इसमें दो तिहाई सदस्य चुनकर आते थे। गौरतलब यहाँ यह भी है कि यद्यपि ऐसी म्युनिसिपल संस्थाएँ और बोर्डस की स्थापना न के बराबर हुई लेकिन स्वशासन के स्वरूप का सूत्रपात तो 1883 से शुरू हो ही गया।

1909 में स्वशासन के समर्थन में रॉयल कमीशन ऑफ डिसेन्ट्रेलाइजेशन की रिपोर्ट आयी। भारतीय संदर्भ में इस कमीशन ने पंचायतों की महत्ता को स्वीकारा। कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन (1909) ने एक प्रस्ताव पारित करके स्थानीय संस्थाओं को पूरी तरह से प्रजातांत्रिक स्वरूप देने की माँग की। इसकी माँग थी कि संस्थान के सभी सदस्य निर्वाचित हों, अध्यक्ष गैर–सरकारी हो और इसे अपने कर्तव्यों के निर्वहन के लिए भरपूर वित्तीय सहायता प्रदान की जाये।

1919 का अधिनियम जब आया तो पंचायत का एक रूप में, संवैधानिक मान्यता पूरी तरह से सिद्ध हो गया क्योंकि इसे हस्तांतरित विषयों के रूप में राज्य को दे दिया गया। इसका एक परिणाम यह भी हुआ कि हस्तांतरित सूची में आते ही यह बाहरी कब्जे से आजाद हो गया।[iii] 1935 के भारत सरकार अधिनियम ने इसे और मजबूती प्रदान किया।

गांधी ने ग्रामीण पंचायत को अपनी पुस्तक 'हिन्द स्वराज' में भारतीय शासन विधि की संरचना का मूल माना। जब आजादी नजदीक

दिखी तो उन्होंने पंडित नेहरू को कई पत्र लिखे। दो पत्रों में जो उन्होंने 1945 में लिखा कि शासन व्यवस्था का सोपान गाँव से शुरू करके केन्द्र तक ले जाने के लिए था। खैर, नेहरू जी ने भी इस बात पर ध्यान नहीं दिया। लेकिन संवियधान सभा में ड्राफ्टिंग कमेटी के चेयरमैन भीमराव अम्बेडकर पंचायतों के बारे में अलग राय रखते थे। पंचायत पर बोलते हुए उन्होंने संविधान सभा में कहा कि जातिवाद, साम्प्रदायिकता, स्थानीयता, अनभिज्ञता के साथ–साथ संकीर्णता ही गाँवों की पहचान है और उसी आधार पर उसके परीक्षण की आवश्यता थी। खैर कुल परिणाम यह था कि पंचायत को राज्य के नीति निदेशक तत्वों की श्रेणी में रखा गया। गांधी जी ने उस समय भी कहा था कि यह एक भूल है और जब तक पंचायत को उचित जगह नहीं दिया जाता, संविधान आम लोगों की भावनाओं को कभी परिलक्षित नहीं कर पायेगा।

स्वतंत्रता के बाद लगातार सत्ता के विकेन्द्रीकरण और पंचायतों की बात उठती रही और ''सामुदायिक विकास योजना (1952) और राष्ट्रीय विकास'' (1953) के अध्ययन के लिए बलवन्त राय मेहता के नेतृत्व में एक कमेटी का निर्माण किया गया। इस समिति ने 24 नवम्बर 1957 को अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंपी। इस कमेटी ने प्रत्येक राज्य में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को संस्थागत स्वरूप देने की सिफारिश की। तत्पश्चात् राष्ट्रीय विकास परिषद ने भी अनुशंसा की कि राज्य अपने यहाँ पंचायती राज्य व्यवस्था को अमली जामा पहनायें। राजस्थान ने इस आधार पर सबसे पहले पंचायती राज की शुरुआत की। पंडित नेहरू ने 2 अक्टूबर 1959 को नागौर जिले में उद्घाटन किया। 11 अक्टूबर को हैदराबाद में इसका उद्घाटन हुआ। 2,17,300 से अधिक ग्राम पंचायतों का निर्माण हुआ। 1960 तक यह कार्य पूरा हो गया था। तीन स्तर थे स्थानीय स्वशासन के:

1. ग्राम पंचायत
2. पंचायत समिति – ब्लॉक स्तर
3. जिला परिषद – जिला स्तर

परन्तु इन पंचायतों के कार्यों की समीक्षा निराश करने वाली है कई–कई वर्षों तक पंचायती चुनाव नहीं होते थे। प्रधान को शायद अपनी शक्ति का एहसास नहीं था। सरकार बार–बार इनके कार्यकलापों को बेहतर बनाने के लिए एक के बाद एक समिति बना रही थी। यद्यपि यह सच था कि लोगों में चेतना का विकास हुआ था, प्रखण्ड विकास पदाधिकारी पंचायती राज संस्थानों के अधीन काम कर रहे थे, जनता और प्रधान के बीच समस्याओं के सम्बन्ध में न केवल विमर्श होता था, वरन् उसका निदान भी होता था। सबसे छोटे कर्मचारियों और निर्वाचित सदस्यों के बीच के भ्रष्टाचार में कमी आयी थी।[iv] किन्तु अभिजीत दत्ता ने इसके विपरीत राय प्रस्तुत करते हैं। उनके मुताबिक ''पंचायती राज संस्थान स्थानीय शासन के मात्र एक ''लिविंग कैरिकेचर'' बनकर रह गए।[v] थॉमस मथाई कहते हैं कि ''ग्राम पंचायत निराशाजनक काम कर रहे हैं और ग्राम सभा एक मजाक है।''[vi]

20 वर्षों के पश्चात दिसम्बर 1977 में जनता पार्टी सरकार ने अशोक मेहता कमेटी का गठन किया। इनसे कहा गया कि पंचायती राज्य के पतन के कारणों को बताते हुए, इसे मजबूती देने के उपायों का सुझाव दें। अगस्त 1978 में इस कमेटी ने अपनी रिपोर्ट दे दी। इसमें 132 सिफारिशें थी, जिनमें 11 अतिमहत्वपूर्ण थीं। मुख्य सिफारिशें थीं[vii]–

1. त्रिस्तरीय पंचायत राज पद्धति की जगह द्वि–राज्य पद्धति का निर्माण हो। जिला स्तर पर जिला परिषद हो और दूसरा मंडल पंचायत हो जिसमें कुछ गाँवों को इस तरह मिलाया जाये कि उनकी आबादी 15000 से 20000 हो।

2. राज्य की देखरेख में जिला, शक्ति के विकेन्द्रीकरण की प्रथम ईकाई हो।
3. जिला स्तर पर जिला परिषद कार्यकारी परिद हो और जिला के विकास के लिए योजनायें तैयार करे।
4. अपने लिए आय का स्रोत जुटाने हेतु इसके पास आवश्यक कानून बनाने का अधिकार हो।
5. योजनाओं पर खर्च की गई रकम को सामाजिक ऑडिट हो। यह विधायकों की एक समिति करे।
6. अत्यन्त आवश्यक न हो तो पंचायती राज संस्थाओं को राज्य के द्वारा भंग न किया जाय और यदि ऐसा करना आवश्यक हो तो 6 महीने के अन्दर फिर से चुनाव हो।
7. राज्य का चुनाव आयोग केन्द्रीय चुनाव आयोग के साथ विमर्श करके चुनाव करवाये।
8. विकास के सारे कार्य जिला परिषद को स्थानान्तरित कर दिया जाय और विकास कार्य से जुड़े सभी अधिकारी इसके अधीन हों।
9. प्रत्येक राज्य में पंचायती राज्य संस्थानों की देख–रेख के लिए मंत्री हों।
10. अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए आबादी के अनुसार सीटों का आरक्षण हो।
11. सभी राजनीतिक दलों की पंचायत चुनाव में सहभागिता अनिवार्य हो।

दु:खद पहलू यह रहा कि जनता पार्टी की सरकार अपनी अवधि पूर्ण किए बिना गिर गयी और इसी के साथ इस समिति की सिफारिशें भी जहाँ की तहाँ रह गयीं। आज भी बलवन्त राय मेहता द्वारा सुझाये गये तरीकों पर ग्राम पंचायत का शासन चल रहा है।

1986 में राजीव गांधी सरकार द्वारा ''रिवाइटलाइजेशन ऑफ पंचायती राज इंस्टीटयूशन फॉर डेमोक्रेसी एण्ड डेवलपमेण्ट'' समिति का गठन एल.एन. सिंघवी की अध्यक्षता में बनाया। इस समिति ने सुझाया कि[viii]–

1. पंचायती राज्य संस्थानों को संवैधानिक दर्जा दिया जाय और संविधान में इसके लिए अलग अध्याय हो। इसके नियमित चुनाव का प्रावधान संविधान में हो।
2. कई गांवों को मिलाकर न्याय पंचायत का गठन हो।
3. पंचायतों को वित्तीय संसाधन उपलब्ध करवाया जाय तथा
4. पंचायत से जुड़े मामलों को हल करने के लिए प्रत्येक राज्य में न्यायिक प्राधिकरण की स्थापना की जाए।

इसके अलावा और भी कई सिफारिशें की। 1989 में पंचायती राज संस्थाओं के अध्ययन के लिए पी. के. थुंगन समिति का गठन किया गया। इस समिति ने भी पंचायतों को संवैधानिक दर्जा देने की अनुशंसा की।

कई प्रयास के बाद पंचायती राज संस्थान को संवैधानिक दर्जा वास्तविक में मिला।

राजीव गांधी की सरकार ने जुलाई 1989 में पंचायती राज को संविधान में वैधानिक दर्जा देने के लिए 64वाँ संविधान संसोधन बिल लोकसभा में पेश किया। अगस्त 1989 में लोक सभा ने इसे पारित कर दिया परन्तु राज्य सभा ने अस्वीकार कर दिया। उनका तर्क था कि बिल में

प्रस्तावित नियम विकेन्द्रीकरण की जगह केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति वाले हैं।

राष्ट्रीय मोर्चा की विश्वनाथ प्रताप सिंह नीत सरकार ने जून 1990 में राज्य के मुख्यमंत्रियों की बैठक पंचायती राज की मजबूती के लिए किये जाने वाले उपायों के लिए बुलाया। नया संवैधानिक संशोधन बिल पास करने को मंजूरी मिली। सितम्बर 1990 में संविधान संशोधन अधिनियम बिल लोकसभा में प्रस्तुत किया गया, परन्तु सरकार के गिर जाने के कारण बिल भी समाप्त हो गया। नरसिम्हा राव की कांग्रेसी सरकार ने विवादि अनुच्छेदों को संविधान संशोधन बिल से निकाल दिया और 1991 सितम्बर में इसे लोकसभा में पेश किया गया। यह बिल अंततः 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के रूप में 1992 में सामने आया और 24 अप्रैल 1993 से लागू हुआ।

यह संशोधन केवल पंचायती राज संस्थान को ही मजबूती नहीं देता वरन् संघीय व्यवस्था में मौलिक परिवर्तन ला दिया। विश्लेषित करते हुए निर्मल मुखर्जी लिखते हैं कि ''अबसे सरकार की तीन परते हैं; केन्द्र, राज्य और पंचायत इससे ज्यादा क्रांतिकारी परिवर्तन हो नहीं सकता है। इसके दूरगामी परिणाम होंगे।''[ix]

पंचायती राज अधिनियम 1992 के मुख्य प्रावधान निम्नलिखित हैंः–

1. गाँव या गाँव के समूह के स्तर पर ग्राम सभा संगठित करना।
2. ग्राम, ब्लॉक और जिला स्तर पर पंचायतों का निर्माण।
3. तीनों स्तरों के सभी पदों का प्रत्यक्ष चुनाव। ब्लॉक और जिला स्तर पर अध्यक्षों/ उपाध्यक्षों का चुनाव अप्रत्यक्ष तरीके से निर्वाचित सदस्यों के द्वारा।
4. सदस्य और अध्यक्ष/उपाध्यक्ष हेतु अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए सीटों का आरक्षण।
5. पंचायती राज के तीनों स्तर पर सदस्य एवं अध्यक्ष/उपाध्यक्ष के लिए एक–तिहाई सीट महिलाओं के लिए आरक्षित।
6. सभी स्तर पाँच साल के लिए। यदि बीच में उसे भंग कर दिया गया तो छः महीने के अन्दर चुनाव।
7. पंचायत राज संस्थानों के चुनाव के लिए राज्य चुनाव आयोग की स्थापना।
8. हर पांच साल में पंचायतों की आर्थिक स्थिति की समीक्षा के लिए राज्य वित्त आयोग का गठन।

यह अधिनियम संविधान के 9वें भाग में अनुच्छेद 243 के रूप में समाहित किया गया है।

तो इस अधिनियम ने गांधी के सपनों को एक हद तो पूरा करने का प्रयास है। निश्चितरूपेण गांधी के सपनों को सम्पूर्ण रूप से साकार करने के लिए केवल संवैधानिक अधिनियम ही काफी नहीं है लेकिन साक्षरता, चेतना और बराबरी के साथ–साथ भयमुक्त समाज की आवश्यकता है।

इस अधिनियम के अंतर्गत जो चुनाव हुआ, उसका विश्लेषण किया जाय तो निम्नलिखित तथ्य सामने आते हैंः–

1. **विकेन्द्रीकरण की पहुँच व्यापक हुई है** : सामान्यतया पंचायत पर दबंगों का दबदबा था। लेकिन अब योजना पंचायत स्तर पर बनने लगी, वार्ड के निर्वाचित प्रतिनिधि जो सबसे छोटी ईकाई है, योजना बनाने के कार्यों में लगे हैं। योजना स्थानीय आवश्यकताओं के लिए है, जिससे ऐसे विकास की संभावना बनती है

जो किसी भी राज्य की राजधानी में बैठकर संभव नहीं है। इस व्यापकता ने ग्राम सभा की होने वाली मीटिंग को सामने रखते हुए भ्रष्टाचार पर लगाम जरूर लगाया है, यद्यपि इसे समाप्त नहीं किया जा सकता है।

अनुसूचित जाति/जनजाति और महिलाओं के लिए आरक्षण ने इन वर्गों की भागीदारी इतनी बढ़ा दी है कि जातीय विद्वेष जहाँ कम हुआ है और लैंगिक समानता को बढ़ावा मिला है, वहीं इस पद्धति ने दबंगों के मन–मस्तिष्क में बैठा दिया है कि अब तो इसी परिधि में काम करना होगा। धीरे–धीरे ही सही लेकिन अन्ततः अगड़ी जातियां भी अनुसूचित जाति से, जनजाति से चुने गये प्रतिनिधि को सम्मान देना सीख रहे हैं।

2. **महिलाओं की भागीदारीः–** सामाजिक कुरीतियों के कारण महिलाओं और पुरुषों में लैंगिक भेद दिखता है। महिलाओं की कार्यक्षमता को कम करके आँका जाता है लेकिन आज स्थिति यह है कि पूरा देश लगभग 30 लाख प्रतिनिधियों का चयन स्थानीय प्रशासनिक चुनाव में करता है तो इसमें 10 लाख तो महिलाएँ हैं।

यद्यपि यह सही है कि निर्वाचित महिलाओं की जगह उनके पति ही काम करते हैं और आम जनता भी मान रही है कि चूँकि महिलाओं के लिए आरक्षण है, इसीलिए पत्नी लड़ी और जीती लेकिन वस्तुतः यह जीत भी उसके पति की है और काम भी उसके पति का ही होगा। पदाधिकारियों का भी यही हाल है। बेगूसराय जिला (बिहार) के एक गाँव का मैंने अध्ययन किया और पाया कि पत्नी मुखिया है और मुखिया कहकर उनके पति को संबोधित किया जाता है। लेकिन यह सार्वभौमिक सच नहीं है। शिक्षित और अपनी पहल से काम करने वाली महिला मुखिया या ब्लाक प्रमुख ने न केवल अपने लिए लोगों के दिल में जगह बना लिया वरन् उसका कार्य पुरुषों की तुलना में ज्यादा प्रभावकारी रहा है। इसका सबसे बड़ा उदाहरण आंध्र प्रदेश से है। वहाँ कर्नूल एक जिला है और उसके एक गांव की सरपंच फातिमा बी. को न्यूयार्क में संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने 17 अक्टूबर 1998 को 'संयुक्त राष्ट्र डेवलपमेण्ट प्रोग्राम्स इंटरनेशनल रेस अगेन्स्ट पावर्टी'' अवार्ड से नवाजा।

य़द्यपि 1999 में बजट भाषण में वित्त मंत्री ने 1999–2000 को ग्राम सभा का वर्ष घोषित किया था, लेकिन यह पूरी तरह सच नहीं है। उनका तात्पर्य यह था कि ग्राम सभा ही ऐसा मंच है जहाँ प्रत्यक्ष प्रजातंत्र दिखाई देता है लेकिन सच तो यह है कि अधिकांश पंचायतों में ग्राम सभा की बैठकें कागज पर होती हैं और नागरिकों से या तो बाद में हस्ताक्षर करवा लिया जाता है या कोई और ही उन लोगों के बदले हस्ताक्षर कर देता है। अतः आवश्यक है कि ग्राम सभा को सोशल ऑडिट के मंच के रूप में अधिक सक्रिय बनाने की आवश्यकता है।

31 अगस्त 2005 को भारत सरकार ने द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग का गठन वीरप्पा मोईली की अध्यक्षता में किया। आयोग का उत्तरदायित्व था कि पब्लिक सेवा के संस्थानों में निष्पक्षता, ईमानदारी और पारदर्शिता के लिए

कारगर उपाय सुझाये। इसका गठन 31 अगस्त 2005 में किया गया। पहला प्रशासन आयोग 1966 में मोरार जी देसाई के नेतृत्व में बनाया गया था। इसके दायरे में जिला प्रशासन भी दिया गया था।[x] इस आयोग ने और चीजों के अलावा इस पर अत्यधिक जोर दिया कि गाँवों की भलाई के लिए जो भी रकम खर्च हो, पंचायत के माध्यम से हो। इस आयोग ने तो यहाँ तक कह दिया कि सांसदों को दी जाने वाली लोकल एरिया डेवलपमेण्ट फंड और विधायकों को दी जाने वाली लोकल एरिया फंड को समाप्त कर दिया जाय और यह राशि भी ग्राम पंचायतों को दे दिया जाए और उन्हीं के माध्यम से विकास का कार्य हो।[xi] लेकिन यह सिफारिश किसे पसन्द आती? एमपीलैंड और एमएललैंड के लिए आबंटित फंड को बढ़ा दिया गया। लेकिन यदि स्थानीय शासन को और मजबूत नहीं किया गया और उसकी उपेक्षा की गई तो केवल संवैधानिक संकट ही नहीं वरन् असंतोष भी फैलेगा।[xii]

तो फिर गांधी का सपना असफल रहा? नहीं, कदापि नहीं। भारत विविधताओं का देश है लेकिन गाँव में तो सारी विविधतायें साथ मौजूद हैं। अलग–अलग जातियाँ, अलग–अलग धर्म, गरीबी की विभीषिका, निरक्षरता, स्वास्थ्य सेवा की कमी और 1992–93 से उसकी उपेक्षा। कुल मिलाकर उसकी कमर टूटी पड़ी है। सरकार, राजनेताओं और राजनीतिक दलों में उसकी स्वीकार्यता बढ़ी है। पंचायती राज ने सामाजिक समरसता और सामंजस्य का सार्थक भाव पैदा किया है। एक सीमा तक नौकरशाहों पर अंकश लगा है। लैंगिक और जातीय दूरी कम हुई है, भ्रष्टाचार मिटा तोनहीं है, लेकिन बहुत कम हुआ है। ई–गवर्नेन्स ने पंचायतों के कार्यप्रणाली पर पारदर्शिता और उत्तरदायित्व को बढ़ाया है और गाँधी या स्वतंत्रता सेनानियों द्वारा हासिल किया गया स्वतंत्रता, स्वराज्य की ओर मुखातिब हो रहा है। गाँधी का सपना अभी अधूरा है लेकिन समय के साथ और मजबूत होगा तथा सपना भी हकीकत का रूप लेगा।

Copyright © 2016, Dr. Basuki Nath Chaudhry. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.

i जार्ज मैथ्यू, ''पंचायती राज इन इण्डिया : एन. ओवरव्यू'', पंचायती राज मंत्रालय, भारत सरकार, संपूण पंचायती राज की ओर, रिपोर्ट, 2013

ii ,म. बेंकटरंगैया और एम. पट्टामीराम (संपादित), लोकल गवर्नमेण्ट इन इण्डिया : सलेक्ट रीडिंग्स, एलाईड पब्लिसर्स, बॉम्बे, 1967, पृ. 97

iii आर.एल. खन्ना, पंचायती राज इन इण्डिया, द इंगलिश बुक डिपो, अम्बाला कैंट, 1972

iv एसोसिएशन ऑफ वॉलेन्टरी एजेन्सीज फॉर रूरल डेवलपमेंट, रिपोर्ट ऑफ दी स्टडी टीम ऑन पंचायती राज इन राजस्थान, नई दिल्ली, 1962

v अभिजीत दत्ता, ''डीसेन्ट्रलाइजेशन एण्ड लोकल गवर्नमेण्ट रिफार्म इन इण्डिया'' इण्डियन जरल ऑफ पब्लि एडमिनिस्ट्रेसन, Vol.-XXXI] नं. 3, जुलाई–सितम्बर, 1985, पृ. 562

vi डेमोक्रेटिक वर्ल्ड, संपादकीय, 22 जनवरी 1978

vii अशोक मेहता कमेटी रिपोर्ट, 1978

viii एल. सिंघवी कमेटी रिपोर्ट

ix निर्मल मुखर्जी, ''द थर्ड स्ट्रेटम'', इकॉनोमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, 1 मई 1993, पृ. 859–62

x विनोद मेहता, रिफॉर्मिंग एडमिनिस्ट्रेशन इन इण्डिया, हर–आनन्द पब्लिकेशन, पृ. 260

xi वीरप्पा मोईली की अध्यक्षता वाले द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग की अनुशंसा।

xii कम्पाइलेशन ऑफ इम्पोर्टेंट ऑर मिनिट्स ऑफ मेजर मीटिंग्स (अप्रैल 2008 से मार्च 2010 तक), मिनिस्ट्री ऑफ पंचायत राज, गवर्नमेण्ट ऑफ इंडिया,नई दिल्ली, 2010, पृ. 28